तत्त्व का होना तो सिद्ध होता ही है। मरुभूमि में जल नहीं होता, तथापि मृगमरीचिका से वहाँ जल की प्रतीति होती है। इससे यह तो सिद्ध होता ही है कहीं न कहीं जल अवश्य है। प्राकृत-जगत् में जल नहीं है, लेशमात्र भी सुख नहीं है, किन्तु वैकुण्ठ-जगत् मे यथार्थ सुख रूपी जल अवश्य है।

श्रीभगवान् का परामर्श है कि हम वैकुण्ठ-जगत् को इस प्रकार प्राप्त कर लें :

निर्मानमोहा जितसंगदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःख संज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत्।।

उस **अव्यय पद** अर्थात् सनातन धाम को **निर्मानमोह** पुरुष ही प्राप्त कर सकता है। इसका क्या अर्थ है? हम उपाधियों के पीछे लगे हुए हैं। कोई पुत्र बनना चाहता है, तो कोई ईश्वर, कोई राष्ट्रपति-पद चाहता है तो कोई धनवान् अथवा राजा बनने का अभिलाषी है, इत्यादि। जब तक हम इन उपाधियों में आसक्त हैं, तब तक देह में भी आसक्त रहेंगे, क्योंकि ये सभी उपाधियाँ देहगत हैं। परन्तु यथार्थ में हम देह से भिन्न हैं—यह अनुभूति ही भगवत्प्राप्ति का प्रथम चरण है। हम माया के गुणत्रय के असद् संसर्ग में पड़े हैं। अतएव यह परम आवश्यक है कि भगवद्भक्ति के द्वारा इनसे असंग (अनासक्त) हो जाएँ। भगवद्भक्ति में अनुरक्त हुए बिना माया के गुणत्रय से असंग नहीं हुआ जा सकता। उपाधियों और आसक्ति में कारण है हमारा काम विकार तथा प्रकृति पर प्रभुत्व करने की कामना। प्रकृति पर प्रभुत्व की इस प्रवृत्ति का जब तक हम त्याग नहीं करते, तब तक सनातन-धाम में पुनः प्रवेश करना सर्वथा असम्भव है। उस अविनाशी धाम में वही प्रविष्ट हो सकता है, जो मिथ्या विषय-सुख के आकर्षण से मोहित हुए बिना भगवत्सेवा के परायण हो जाता है। ऐसे भक्त के लिए परम-धाम की प्राप्ति अतिशय सुगम है।

गीता में अन्यत्र कहा गया है—

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम्।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम।।

अव्यक्त अर्थात् 'अप्रकट'। भगवद्धाम के सम्बन्ध में तो कहना ही क्या है, पूरा का पूरा प्राकृत-जगत् तक हमारे सामने प्रकट नहीं है। हमारी इन्द्रियाँ इतनी अपूर्ण और दोषयुक्त हैं कि इस जगत् के सारे नक्षत्रों को भी हम नहीं देख सकते। वैदिक शास्त्रों में सम्पूर्ण लोकों के सम्बन्ध में प्रचुर जानकारी प्राप्त है, उस पर विश्वास करना अथवा न करना हमारे ऊपर निर्भर करता है। वैदिक शास्त्रों, विशेषतः श्रीमद्भागवत में सभी प्रधान लोकों का विशद वर्णन है। इस संसार से अतीत वैकुण्ठ-जगत् को वहाँ 'अव्यक्त' कहा गया है। उसी परम धाम की प्राप्ति के लिए वाँछा और उद्यम करे, क्योंकि उसे प्राप्त हो जाने पर फिर इस संसार में पुनरागमन नहीं होता।

उस भगवद्धाम को प्राप्त करने की पद्धति का वर्णन आठवें अध्याय में है: